UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182988

UNIVERSAL

OUP—552—7-7-66—10,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81 B57E Accession No. P. G. H92

Author भट्ट, उदयशंकर

Title एकला चलो रे

This book should be returned on or before the date last marked below.

एकला चलो रे

काव्य कण—१

एकला चलो रे

[रूपक]

उदयशंकर भट्ट

राजकमल प्रकाशन दिल्ली

सर्वाधिकार सुरक्षित
राजकमल पब्लिकेशन्स लिमिटेड दिल्ली द्वारा प्रकाशित
गोपीनाथ सेठ द्वारा नवीन प्रेस दिल्ली से मुद्रित
मूल्य एक रुपया

संसार के सभी महापुरुष जिन्होंने मनुष्य जाति का पथ प्रशस्त किया है; भयाक्रान्त, पीड़ित, मानसिक, सामाजिक, राजनैतिक रोगियों को स्वस्थ जीवन, कर्तव्य की भावना, सद्‌बुद्धि, सद्‌विवेक, सदाशयता, प्रदान की है; जिन्होंने बीहड़ पथों, घने जंगलों, तूफानी-नदियों, बिजलियों से कड़कते, मूसलाधार वर्षा से भग्न, अग्निदाह से प्रज्वलित संसार में मानवजाति की कल्याण कामना से ऊर्जेस्वित होकर नवीन पथ, नवीन मार्ग, नवीन दिशा, नवीन प्रकाश, नवीन ज्ञान के द्वारा विश्व के लोगों को प्राणदान दिया है—वे सब संसार की चिन्ता किये बिना अपनी आत्मा से निर्धारित, विवेक से प्रकाशित, चिन्ता से उद्‌भूत अपना अकेला मार्ग बनाकर चले हैं। वे कभी सामाजिक गर्हा, कुधर्म के आडम्बर, रूढ़ियों की परंपरा से प्रभावित नहीं हुए और सदा अकेले ही चले हैं। कृष्ण, बुद्ध, ईसा, मुहम्मद और गांधी—सभी ने संसार में उसके कल्याण के लिए नवालोक दिया। गांधीजी की नोआखाली यात्रा इसी प्रकार की यात्रा थी।

एकला चलो रे

यदि तोर डाक सुने केउ ना आसे तबे एकला चलो रे,
एकला चलो, एकला चलो, एकला चलो रे,
यदि केउ कथा न कय, ओरे ओरे ओ अभागा,
यदि सवाई थाके मुख फेराये, सवाई करे भय,
तबे परान खुले,
ओ तुइ मुख फूटे तोर मनेर कथा एकला बोले रे।
यदि सवाई फिरे जाय, ओ रे, ओ रे, ओ अभागा,
यदि गहन पथे जाबार काले केउ फिरे ना चाय
तबे पथेर कांटा,
ओ, तुई रक्त माखा चरन तले एकला चलो रे।
यदि आलो ना धरे, ओ रे, ओ रे, ओ अभागा,
यदि झातु बादले आंधार राते दुआर देय परे
तबे बज्रानले,
आपन बुकेर पांजर जालिये निये एकला जलो रे।[1]

---

1 स्वर्गीय रवीन्द्रनाथ ठाकुर का एक गीत

यदि तेरी पुकार *सुनकर कोई नहीं आता, तो तू
अकेला ही चल,
अकेला चल, अकेला चल, अकेला ही चल,
यदि किसी के मुंह से शब्द न निकले, अरे, अरे,
ओ अभागे,
यदि सभी मुंह मोड़ लें, यदि सभी भयभीत हों,
तब अपने प्राणों को उन्मुक्त करके—
तू स्वयं अपनी तान छेड़ दे, अकेला ही तान छेड़ दे।
यदि तेरे संगी साथी सभी लौट जायं, अरे, अरे,
ओ अभागे,
यदि दुर्गम पथ में कोई तेरा साथ देने का इच्छुक न हो,
कंटकाकीर्ण मार्ग में—
रक्तरंजित चरणों से, ओ भाई, तू अकेला ही चल।
यदि प्रकाश के लिए कोई दीप नहीं रखता,
यदि मेघाच्छन्न और अंधकारपूर्ण रात्रि में कोई घर का
द्वार बन्द कर देता है,
तब विद्युत् के समान—
अकेला ही सबके लिए दीपक बनकर जल।

एक स्वर

ढाई सहस्र वर्ष पूर्व ऐसे ही एक दिन—
घरबार छोड़कर, तोड़कर मोह माया,
विषम विकार युक्त,
अधिकार द्वारा मुक्त,
चल दिया,

इसी भूमि प्रांगण में—
वीर एक—
धीर एक—
निर्भय शरीर एक—
भेद-मोह प्राचीर—
निर्भय अकेला ही सविवेक पूत मन,
विश्व की कथाएँ,
अविवेक की व्यथाएँ भर,
दुख त्रस्त, अस्त व्यस्त,
जग को,
समस्त को,
प्राण विश्रान्ति देने,
शान्ति देने,
एक दिन, एक दिन, युग युग, युग, बीते।

वह महाभिनिष्क्रमण उस देवदूत का,
मानव प्रपूत का,
कौन नहीं जानता है,
इससे बने वे शुद्ध,
ज्ञान बुद्ध,
प्राण बुद्ध,
दया बुद्ध,
क्षमा बुद्ध,
सत्य बुद्ध,

श्रेय, प्रेय, ध्येय से प्रबुद्ध बुद्ध।
जिनके प्रकाश से,
और पूत हास से
शान्त विश्व प्राण हुए,
सत्य ने,
दया ने,
क्षमा, धैर्य शम, दम ने मानो अवतार लिया—
मुक्त करने को जग,
दु:ख हरने को भव, सागर अपार का,
आधि-व्याधि अभिभूत विश्वपारावार का।

दूसरा स्वर

और अकेला, एक वीर यह चला अकेला
करुणापाठ पढ़ाता सा,
जन के लिए महानर ईसा, प्राणविभूति चढ़ाता सा;
वह प्रकाश ले, वह विकास ले, फिलस्तीन में उदय हुआ,
फैल गया नभ के छोरों तक जिसका करुणाहास नया,
जिसने मानव के दुख को दुख जाना और उपाय किया
करुणामिश्रित मधुर हास से सारा पाप अपाय किया,
वह ईसा थे, क्षमा, शान्ति के, दया धर्म के पुंज महान,
वह ईसा थे, रोगी, पीड़ित, दु:ख दरिद्र के दयानिधान,
वह भी एक महाभिनिष्क्रमण वरदानी ईसा का था,
जिसने मानव के पशुबल को, घृणा व्यंग को पीसा था;

चला अकेला वह सशक्त निःसीम प्राण का बल लेकर
चला अकेला दुख विदग्ध को दया सिन्धु का जल देकर।

तीसरा स्वर

फिर छः सौ वर्ष बाद उतरा अरब देश में एक दूत
विश्वास नया भर, हास नया भर, ज्ञान नया भर देवदूत।
संगठित किया जग को उसने, मानव वह प्राण अकेला रे,
आचार धर्म का ध्येय, ज्ञेय, अज्ञेय खुदा का चेला रे;
है एक खुदा, है एकेश्वर, हैं एक पुत्र उसके सारे,
सब अपने हैं, है व्यर्थ ज्ञान यह अपना और पराया रे;
उसने दी दृष्टि नई जग को, उसने दी सृष्टि नई जग को,
उसने नव प्राण दिये जग को, उसने नव ज्ञान दिये जग को;
सब मानव एक समान बनो, सबमें आलोक उसी का है,
सबमें विश्वास उसी का है, सबमें उद्योग उसी का है,
है एक खुदा, अल्लाह एक है, एक जाति वह मानव है,
उस पर विश्वास करो साथी, वह नित्य, सत्य, अक्षय, नव है;
आपस में लड़ने वालों को लड़-कटकर मरने वालों को;
यह ज्ञान दिया, यह ध्यान दिया, भाईचारे को स्थान दिया;
वह चला एक, वह उठा एक, वह बढ़ता ही जाता था नर,
वह देवदूत, वह जन सहचर, निर्भेद मोहम्मद पैगम्बर।

एक स्वर
संदेश सुना किसने इनका
कुछ याद रहा कुछ भूल गये;
घर में दीवारों पर फिर से
फिर धूल चढ़ी प्रतिकूल गये;

दूसरा स्वर
स्वार्थ ने, विषयों ने घेरा
धन के मद ने झकझोर दिया;
कर्तव्य गया, सब ज्ञान गया,
उद्देश्य गया, आदेश गया;

तीसरा स्वर
जन क्रुद्ध हुए फिर युद्ध हुए
पशुओं से लड़े परस्पर वे;
मूर्खता बढ़ी, अज्ञान बढ़ा
प्रलयंकर अधम अधमतर वे;

चौथा स्वर
फिर नाश हुआ, जन जनता का,
देशों का जीवन ज्ञुब्ध हुआ;
विध्वस्त हुआ सब त्रस्त हुआ,
सुख का सागर विक्षुब्ध हुआ;

एक स्वर
रह रहकर दुख की घटा घिरी,
रह रहकर बिजली टूट पड़ी;
रह रहकर प्रलय मेघ छाये,
रह रहकर बादल टकराये;

दूसरा स्वर फिर युद्ध हुए, जन क्रुद्ध हुए,
आकाश फटे, विश्वास हटे;
धरती चिंघाड़ उठी पागल,
पर्वत फुंकार उठे हिलहिल;

नर बना जानवर से बदतर,
नर बना राक्षसों-सा दृढ़तर;
वह दयाहीन, करुणाविहीन,
वह क्रूर नृशंस वासनाधीन;

बम्बों से कम्पित गगन हुए,
तोपों से पीड़ित सुजन हुए;
नर नाश फूट कर उदधि बने,
विश्वास टूटकर जलधि बने;

औ' एटम बम्ब भयानकतर,
दानव-सा आया प्रबल प्रखर;
सब ओर नाश, सब ओर प्रलय,
सब ओर निराशा तिमिर अनय;

एक स्वर उस समय बाल रवि हंसा एक,
उस समय जगा मानो विवेक,
उस समय जगा विज्ञान ज्ञान,
उस समय हँसे करुणानिधान,

उस समय दिशाएँ मौन खड़ीं,
उस समय तारिका मुग्ध जड़ी;
उचके पर्वत सुनने को स्वर,
झुक आये बादल विह्वल तर;

तेतीस कोटि एकत्रित स्वर,
तेतीस कोटि कल-कंठ मुखर;
भर प्राणों में विश्वास प्रलय,
'गांधी की जय गांधी की जय';

वासनाविहीन, दीनों का स्वर,
पीयूष विमल, पर दुखकातर;
करुणा कृपाण, परमार्थ प्राण,
बीसवीं सदी का बुद्ध ज्ञान;

गांधी गौरव का ज्योति पुंज;
अविजेय किन्तु करुणा निकुंज;

दूसरा स्वर

उसने देखा जग दुःखआर्त,
पीड़ा से व्याकुल विकल स्वार्थ;
कुंठित मति, विगलित स्वाभिमान,
रोगी, स्वार्थी, अविवेकवान;

एकला चलो रे

देशाऽनुबंध से शून्य दीन,
स्वाधीन भावना विभवहीन;
ईश्वर विश्वास प्रेम का पथ,
चल दिया अहिंसा ऋत अनुगत;

थे सत्य अहिंसा के दो कर,
करुणा के डगमग दो पगधर;
वह चला रूँधता कीचड़ पथ,
वह चला दिखाता जीवन पथ;

तीसरा स्वर

प्रत्येक चरण संस्कृति चलती,
प्रत्येक चरण उन्नति चलती;
प्रत्येक चरण युग-धर्म चला,
प्रत्येक चरण युग-कर्म चला;

प्रत्येक चरण सभ्यता चली,
प्रत्येक हृदय भव्यता चली;
वह चला सुशीतल पवन चला,
आत्माभिमान का गगन चला;

वह चला पाप का दमन चला,
वह चला चन्द्रमा मगन चला;
था एक सत्य उसका साथी,
थी एक अहिंसा की थाती;

उसने बढ़ बढ़ कर युद्ध किये,
शव में जोवन उद्बुद्ध किये;
स्वातंत्र्य किया युग-दास उठे,
सोते सोते विश्वास उठे;

सूत्रधार छाईं फिर घटाएं घोर प्रलय जलद की-सी
राम कृष्ण प्रान्त पर,
मुंज कुंज कान्त पर,
वंकिम प्रदेश पर,
शस्य भूमि श्यामल सुदेश पर;

खेलता है राशि-राशि,
प्रकृति समुल्लास जहाँ,
नारियल, ताल,
हिंताल, कत्थ तुंबरी के,
मधुरतर कदली के,
फले जहां तरुवर,
मुग्धकर, शुचितर,
सर प्रतिच्छाया भर,
तालों में, तटों पर,
है अनंत पुष्पपुंज,
मुक्त मुक्त, कुंज कुंज,

रस से सुवासित औ'
अमन्द मन्द मकरन्द,
माधवी से,
चम्पा से,
चमेली से,
गुलाब से,
रजनी की रानी शुभ्र रजनी सुगन्धा से,
प्राण प्राण हर्षकर,
मानस उत्कर्ष कर,

झूमते हैं चूम चूम सुन्दर समीर नीर,
फूलती है कविता मनोज्ञ रस-भरिता सी,
सरिता सी धौत शुभ्र,
अभ्रहीन शारदीया—
कार्तिकीय राका सी
मोद कर,
मुग्धकर,
रस, रूप, शिवतर,
नवीन प्राण वाहिनी,
काहिनी कथाएं लिये,
नित्य उगता है जहाँ,
उर्वरा धरा के सम—
सभ्यता, विलास का मौन, मुग्ध-हास का,
प्रखर प्रखर स्रोत कविता का मधुकर,

कल्पना का, भावना का,
साधना का, मन का।

एक स्वर यह उसी बंगाल की दक्षिण दिशा में
नौआखाली है जिला पद्मा नदी पर,
जहां रहते थे पुराने समय से सब एक होकर,
युक्त होकर, एक प्राण समान भाई;
और वह भी हो गया खग्रास बिलकुल,
मृत्यु का, उपहास का, जीवन निशा का;
नरक रो उट्ठा निरख उसकी दशा को,
स्वर्ग का संगीत मरघट का रुदन था;
शत्रुता, मात्सर्य, कटुता, व्यंग्य, कुत्सा,
और पद्मानदी न्हाई खून से फिर।

दूसरा स्वर मरण का उल्लास नाचा, नरक का उपहास नाचा,
अग्नि तांडव काल नाचा, प्राण का कंकाल नाचा,
हृदय का हडकम्प नाचा, धरा का भूकम्प नाचा,
वृक्ष रोये, जीव रोये, सरित रोई हिलकियाँ भर,
जब उदग्र महान् पापों का प्रखरतम हास नाचा;
बचा कोई भी न था जो जल न पाया आग में हो,
बचा कोई भी न था जो ले सका हो साँस सुख की।

तीसरा स्वर क्षीण काया में उठी आवाज़ पर्वत फोड़ती सी उस समय,
उस समय देखा गगन ने और घन ने उस समय,

तारिका ने, रात ने, तरुवल्लरी के स्वप्न ने,
और तेतीस कोटि प्राणों ने सुना स्वर उस समय;

नेपथ्य में — जाऊंगा मैं, नौआखाली जाऊंगा मैं आज ही;

एक स्वर — आज मेरी अहिंसा का यह परीक्षाकाल है;
आज मेरा सत्य ही आह्वान मेरा कर रहा;
देखना है जीतता है कौन—मैं, गृह युद्ध यह ?
देखना है अहिंसा का छोर कितनी दूर है !

दूसरा स्वर — चल नौआखाली, परीक्षा आज है,
चल नौआखली, घृणा का राज है;
साँस में विश्वास में है भर रही,
नौआखाली नौआखाली चल वहीं;

प्राण यह सत्प्रेम के ही मूल हैं,
अहिंसा के नहीं चुभते शूल हैं,
सदयता सत्प्रेम पारावार है,
यही जीवन का महानाधार है;

जब तलक जलती वहाँ पर आग है,
जब तलक कटुता हृदय में दाग है;
जब तलक फैला वहाँ दुख भार है,
तब तलक यह साँस भी बेकार है।

तीसरा स्वर	राम का ले नाम वह मानव चला,
विश्व के कल्याण को संभव चला।

पहला स्वर	वह अठहत्तर वर्ष का बूढ़ा कम्पित गात,
लकुटी ले अर्धांग पट निकला एक प्रभात;

दूसरा स्वर	तिमिर में प्रलय में न तूफान में भी,
कदम ये रुके हैं न रुक पायेंगे ही;
मिलेंगे उसे शत्रु भाई समझ कर,
अड़ेंगे हिमालय निहुर जायंगे ही।

तीसरा स्वर	उसने जो संदेश दिया वह जीवन का संदेश बना,
उसने जो आदेश दिया वह जीवन का आदेश बना;

उसने कहा—
शान्ति तो सचमुच मन में सोती रहती है;
उसने कहा—
भूल पागलपन, जड़ता ढोती रहती है।

वीर बनो तुम, स्वयं न कोई मार सकेगा तुम्हें कहीं,
निर्भय बनो, असंशय भी हो, तुम को दुख है कहीं नहीं।
निर्भय होकर लड़ो पाप से, निर्भय होकर चलो, बढ़ो,
भय ही है विनाश का कारण, भय का पर्वत पीस चढ़ो;

डरो पाप से, बुरे कार्य से, और ईश से सदा डरो,
भय न करो मानव से मानव, निर्भय हो,निर्भय विचरो;
मैंने सीखा है बचपन से दोषों से नफरत करना,
मैंने सीखा है बचपन से पापी को सज्जन करना;

खून नहीं बदले में देता प्रेम खून ही करता है,
कहाँ घृणा से पाप बुझा है, द्वेष दया कब करता है ?

पहला स्वर

वह अहिंसा का व्रती उपदेश फिर देने लगा,
प्राणियों को सत्य का संदेश फिर देने लगा;
न था संशय नाम को भी हृदय में उसके कहीं,
वह असंशय लगा कहने सभी से बातें सही।

दूसरा स्वर

एक बोले—यह सही है आपका उद्देश्य पावन,
किन्तु परिवर्तन हृदय का कष्टदायक दीखता है;
तुरत उत्तर मिला—संभव, आपकी बातें सही हों,
कदाचित्, मुझको न भी हो कामयाबी मान लूं मैं,
किन्तु निज को मिटा तो सकता सही हूं;
पर अहिंसा की महत्ता नहीं होती है अनिश्चित;

कौन कह सकता कि मेरे हैं प्रयोग असत्य से युत,
कदाचित् उनमें भरी हो भूल, जिससे ज्ञात हो
यह 'अहिंसा भ्रममूल है औ' सत्य कच्ची डोर है'।

तीसरा स्वर आपका कहना सही है—दूसरे तत्काल बोले—
किंतु फिर भी यत्न करना चाहिए हमको सदा ही;
देश का कल्याण ही इससे न होगा—
स्वयं ही मैं आत्मशिव को खोजने आया यहाँ हूँ;
है अहिंसा नहीं केवल, एक ही जन के लिए वह,
सभी प्राणीमात्र का कल्याणकारी अस्त्र है;
मैं इसी विश्वास को लेकर यहाँ आया सुनो,
हारना सीखा नहीं है कभी मैंने, सत्य यह,
पराजय को विजय में देता बदल है सत्य यह;
और यदि मैं हार जाऊँ, किन्तु तो,
क्या हारता है वह महाव्रत में व्रती जिसका रहा;

हो नहीं सकती अहिंसा भूठ फिर भी—
मैं कहूँगा साधना मेरी अधूरी रह गई,
या कि उसके तरीके में भूल है।
टटोलो अपना हृदय खोजो ज़रा,
प्रेम ही क्यों घट गया उसमें अरे,
यह सुनिश्चित है कि जीवन प्रेम का आधार है,
प्रेम के विपरीत जीवन मृत्यु है, दुख, दर्द है।

चौथा स्वर फिर कहा—हिन्दू मुसल्माँ एक हैं,
एक ही है ईश्वर उनका पिता,
सत्य यह है मैं मुसल्मां हूँ अगर,
किन्तु है हिन्दुत्व भी भरपूर ही,

पारसी भी मैं, किरानी, सिक्ख भी,
प्रवर्तक तो सभी सच्चे थे, महान् ।

पहला स्वर
रुधिर से रंजित धरा को देखकर,
काँप उठ्ठे प्राण मानव-दूत के,
खिंच गई सारी शिरायें धमनियाँ,
रो उठा विक्षुब्ध चेतन रो उठा,
नाम को भी थी नहीं उसमें घृणा,

नाम को नहीं था विद्वेष लघु,
एक ही आवाज़ आती हर समय—
हो सदा कल्याण सबका हे प्रभो,
दिखाओ सत्पथ इन्हें दुख दूर कर;

प्रार्थना करता सदा ही वह रहा,
और समझाता रहा बंगाल को,
कष्ट में भी वह नहीं हारा कभी,
सत्य कहने से न चूका सत्यमय ।

दूसरा स्वर
वह महामानव कि अभिनव बुद्ध था,
कर्म से, मन से, वचन से शुद्ध था;
जब सुना उसने सहस्रों जन बलात्,
मुसल्मां हैं बना डाले भय दिला,

तब कहा उसने गरज से, स्नेह से—
धर्म परिवर्तन नहीं होता बलात्;

धर्म तो है मात्र मन की भावना,
किसी ने कलमाँ पढ़ाया यदि हमें,
बन गये तो क्या मुसल्मां बस वहीं ?
और कलमां है भला क्या यही तो—

एक ईश्वर है, खुदा वह एक है;
वह निरंजन ज्ञानमय अविकार है;
यदि प्रपीड़ित जनों से कहला दिया,
सत्य ही क्या वे मुसल्मां बन गये ?

है मुसल्माँ वही—खलकत खुदा की
मान कर सेवा सदा करता रहे;
नहीं है उसके सिवा कोई कहीं,

जबरदस्ती धर्म जब बदला गया,
आत्म शोधन भी अपेक्षित है नहीं,
नहीं प्रायश्चित उनको चाहिए,
नहीं कोई पाप लोगों ने किया।

तीसरा स्वर
था अकेला किन्तु फिर भी साथ थे,
अहिंसा के, सत्य के दो हाथ थे;

एकला चलो रे

दृढ़ व्रती का पथ अदम्योत्साह था,
दुखी का कल्याण ही पथ-वाह था;
हृदय का विश्वास उसके संग चला,
सूर्य सा उल्लास भर कर रंग चला;

प्रकृति ने मखमल बिछा दी पंथ में,
भर दिया उत्साह प्रभु ने सन्त में;
पवन ने काँटे हटाये राह के,
संग उत्सुकता चली उत्साह के;

दृष्टि के सँग दया भी चलती रही,
प्रेम के सँग क्षमा भी चलती रही;
शत्रुता सरिता बनी औ' बह गई,
दया केवल प्रेम के सँग रह गई;

कृपा करुणा कोर अँकुराई उठी,
नव बसंती हास अमराई उठी।

चौथा स्वर

रामगंज में जब कष्टों से पीड़ित जर्जर महिलागण को
देखा महामहिम मानव ने
रोया उसका मन, व्याकुल तन,
उन्मन उन्मन,
दुःखाभिभूत हो उठा तभी,
शोकाभिभूत हो उठा तभी,

बढ़ गई हृदय की गति, उन्मति,
धमनी कंपित,
विह्वल पलपल,
फूली पँखुरी से साँस चले,
उच्छ्वास चले—
विश्वास चले—
दृढ़तर होकर—
पर्वत के सम,
दृढ़तम दृढ़तम;

गंभीर हृदय ले प्राण विमल,
उस महाकाय ने सम उपाय ने,
विषम गरल पी पुण्य श्लोक ने,
महालोक ने राम नाम का—
हृदय धाम का, लेकर संबल,
कहा शान्त हो, विगत क्लांत हो,
जैसे माता का स्नेह प्रसृत हो;
शिशु के आगे; बोला तब वह—
मेरा दिल रोता है तुमको देख-देख कर,
मैं तुमसे क्या कहूँ—स्वयं तुम जगमाता हो,
महा शक्ति हो, प्रेम, भक्ति हो,
तुमने सीखा है कष्टों से लड़ना,
तुमने सीखा पापों से अड़ना,

आत्मसमर्पण सीखा तुमने पति स्नेह के आगे,
पुत्र स्नेह के आगे,
क्या आज भूल तुम गईं प्रतिज्ञा कई,
जीवन के कष्टों की धारा में,
मंथन करने वाली पीड़ा की कारा में,
तुम लड़ो —
और तुम लड़ना सीखो,
पापी के सम्मुख आत्मसमर्पण से पहले तुम मरना
सीखो;

यदि जियो, मान से जियो,
यदि जियो मान से, कीर्ति, वीरता,
धैर्य, शूरता, बहादुरी से जियो;
नहीं तो मर जाओ—
मर जाओ,
दुष्टों के पंजों में आने से पहले मर जाओ।
है मृत्यु तुम्हारे पास,
शान्ति-सहचरी,
धर्म की तरी,
शाश्वत, शान्ति, प्राण-विश्रान्ति दे देने वाली।
मुझको है मालूम बहुत सी बहनों के हैं,
प्राण सहारे भाई, पति, बच्चे हैं—
जो गये, गए हैं मारे—
बहुत सी बहनों का है हुआ अनादर,

अपमानित, संताड़ित, पीड़ित,
हुई सतत हैं,
धर्मभ्रष्ट भी हुईं,
नष्ट भी हुईं,
कष्ट भी पाये,
धैर्य अपनाये
वे वीरांगना बनी हैं प्रतिपल,
और वीर माताएं, वीर ललनाएं—
बनीं निडर भी रहीं—सुना सब।
किन्तु सत्य का लेकर यदि बल
चलें अहिंसा के साँचे में ढल,
न कोई कुछ भी कर सकता है उनका,
वे अविजेय रहेंगी—
समझकर जग को केवल तिनका।

पहला स्वर वह महाप्राण घूमा घर घर,
वह गया खेत, खलिहान, नगर,
मारने वालों को समझाया,
मरने वालों को समझाया,

पुचकारा निर्भय किया उन्हें,
ढारस का जीवन दिया उन्हें,
उसने पापी को अपनाया,
उसने पीड़ित को अपनाया,

बेघर का घर आबाद किया,
जीवन का नया प्रसाद दिया,
निःस्नेह जनों को स्नेह दिया,
निर्गेह जनों को गेह दिया,

जो भाग गये थे, वे लौटे,
जो छिपे हुए थे, वे लौटे,
जो लज्जित अपने कर्मों पर,
जो लज्जित थे, पीड़ित थे नर,

वे दया मूर्ति के पास गये,
पछताते हुए उदास गये,
विश्वास नया पाया सबने,
आभास नया पाया सबने,

उल्लास नया पाया सबने,
आवास नया पाया सबने,
पापी के सारे पाप धुले,
अभिशप्तों के अभिशाप धुले,
नौआखाली ने यह देखा,
जादूगर ने खींची रेखा,

बंध गई प्रेम नौआखाली,
छा गया स्नेह नौआखाली,

पापी के मन की हार हुई,
जब राम रहीम पुकार हुई।

नेपथ्य में — रघुपति राघव राजा राम,
पतित पावन सीता राम,
ईश्वर अल्ला तेरे नाम,
सबको सन्मति दे भगवान्।

दूसरा स्वर — इस तरह मिलाया भाई को भाई से फिर,
नव प्राण दिया,
सन्मान दिया,
उल्लास दिया,
नवजीवन का मधुमास दिया,
महिलागण को सान्त्वना मिली,
पीड़ित को प्राणाधार मिला,
पापी ने प्रायश्चित किया,
सेवा को प्राण निमित्त किया,

औ' पुण्य धाम की, राम नाम की,
गूँजी ध्वनि ईश्वर अल्ला की,
राम रहीम मिले जलथल में,
नौआखाली के कलकल में,
साक्षी होकर सबने देखा,
भाई भाई से मिले गाढ़,

बहनों में आई प्रेम बाढ़,
फिर वातावरण बना रस का,
विश्वास बढ़ा सत्साहस का,
सब जग ने देखा यह जादू
फिर हार विजय में बदल गई,
फिर मृत्यु जगत से छली गई,
वृक्षों, पत्तों से पुष्पों से,
सरिता से, क्यारी, कूपों से,
खेतों से औ' खलिहानों से,
कुंजों से और मकानों से,
आवाज़ आज भी आती है,

वह जादू था जादूगर का,
उस देवदूत का वह स्वर था,
जो चला अकेला—
इसी भूमि पर—

तीसरा स्वर

डगमग डगमग अठहत्तर वर्षों का पंजर,
ले नया एक गर्जन का स्वर,
नौआखाली तो है प्रतीक
जो प्राणी को दे रहा सीख;

है प्रेम, अहिंसा, धर्म, सत्य,
है राम नाम ही परम तथ्य,

उस पर दृढ़तर विश्वास करो,
जन-हित पथ निर्भय हो विचरो,
पापों से घृणा करो संतत,
पापी को मन से अपनाओ,
सब धर्मों का सम्मान करो,
सत्कर्मों का सम्मान करो,
जन-जन की शुभ कामना करो,
भाई भाई बनकर विचरो;

शत्रुता मृत्यु है जीवन की,
है परम प्रेम ही महा सत्य,
अपने प्रति सच्चे बनो सभी,
हो सकते पर के लिए तभी,
है सत्य राम, है सत्य नाम,
है राम रहीम एक ही तो,
है जहाँ धर्म, है वहाँ विजय,
है जहाँ सत्य, है वहाँ विजय,
है जहाँ अभय, है वहाँ विजय,
है जहाँ अहिंसा—वह निर्भय।

प्रार्थना

मणि मंगलमय विजय करो।
वीर प्रसू को, भारत भू को पाप ताप से अभय करो;
जन्मभूमि यह, कर्मभूमि यह, धर्मभूमि भारत जननी,
स्वर्गभूमि यह, मातृभूमि यह, कला कल्पना की अवनी,
अमृत नीरमय, मधु शरीरमय, महाप्राणमय हृदय करो।
मणि मंगलमय विजय करो।
गंगा, यमुना, सरयु, सरस्वति, ताम्रपर्णि क्षालितचरणा,
विन्ध्य, हिमालय, सौख्य सुधालय कल्पवृक्ष-कुसुमाभरणा,
सुरनरवन्दित, जन अभिनन्दित, जनमन में नव प्रणय भरो,
मणि मंगलमय विजय करो।
तीस कोटि सुत की माता तू, ज्ञान शक्ति बल की धाता तू,
पंडित, कवि, नीतिज्ञ, तपस्वी, ऋषि, मुनि की पालक त्राता तू,
मां, फिर इनमें स्वतन्त्रता की शक्ति, अहं, सुख, विनय भरो,
मणि मंगलमय विजय करो।
वीर प्रसू को, भारत भू को, पाप ताप से अभय करो;
मणि मंगलमय विजय करो।

यह रूपक गांधी जयन्ती (२ अक्टूबर, १९४८) के अवसर पर आल इण्डिया रेडियो दिल्ली से प्रसारित किया गया।